ओ३म्

आर्यसमाज के नियम व उद्देश्य



1. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरुप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा,अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर,अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।
3. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना, पढ़ाना और सुनना, सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।
6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सब से प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

Shervani Art Printers Delhi-6 Ph.: 23943292

ओ३म्

वेद ईश्वरीय ज्ञान



डॉ० कृष्णवल्लभ पालीवाल

प्रकाशक - दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा
15, हनुमान रोड़, नई दिल्ली -110 001
मूल्य 2.50 रु.

आर्यसमाज के नियम

1. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदिमूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है उसी की उपासना करनी योग्य है।
3. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहियें।
6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात्, शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतंत्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतंत्र रहें।

श्री विनय आर्य महामंत्री दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, 15-हनुमान् रोड, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित तथा शेरवानी आर्ट प्रिंटर्स 1480, गली कासिमजान, बल्लीमारान, दिल्ली-6 में मुद्रित। प्रथम संस्करण 2003,

वेद ईश्वरीय ज्ञान

डॉ॰ कृष्णवल्लभ पालीवाल

यहाँ विचारणीय प्रश्न यह है कि "क्या मानव ज्ञान का आदिस्रोत ईश्वर है?" यदि है तो क्या वह ईश्वरीय ज्ञान केवल वेद ही है, अन्य ग्रंथ नहीं? इन प्रश्नों के समाधान के लिए हमें ईश्वर, ज्ञान और वेद इन तीनों शब्दों के अर्थ समझने होंगे। ईश्वर सृष्टिकर्त्ता, सर्वाधार, सर्वव्यापक, सच्चिदानन्द, सर्वान्तर्यामी, निराकार, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र आदि गुणों से पूर्ण सत्ता है, जबकि ज्ञान सत्य, शाश्वत नियम, सृष्टि नियमानुकूल, सर्वहितकारी मानवमात्र के लिए एक समान व्यवहार्य, प्रमाण एवं तर्क से सिद्ध पक्षपात रहित विद्या है। वेद मंत्र संहिताएँ हैं जो कि समस्त विद्याओं का भंडार एवम् आदिमूल हैं।

वैदिक धर्म के समस्त मत एवं सम्प्रदायों का आदिस्रोत वेद ही हैं। वैदिक धर्मानुयायियों का परम्परागत यही विश्वास है कि वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं। महान् युगद्रष्टा, सत्योपदेष्टा, वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने उसी परम्परा की धारणा की पुष्टि करते हुए घोषणा की थी कि "सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उनका आदिमूल परमेश्वर है। वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।" इसका अभिप्राय यह हुआ कि वर्तमान एवं भविष्य में जो भी ज्ञान-विज्ञान, तकनीक, कला कौशल, तत्त्वज्ञान, दर्शन, चिन्तन, नैतिकता एवं विभिन्न विद्याएँ हैं उनका आदि स्रोत ईश्वर एवम् ईश्वरीय ज्ञान वेद ही है। मगर क्या यह निष्कर्ष आज ज्ञान के मुक्त आदान-प्रदान व संचार के युग में तर्कपूर्ण एवं बुद्धिसंगत है? क्या मनुष्य अपने चिन्तन-मनन एवं परीक्षणों से उसे अर्जित नहीं कर सकता है?

आदि ज्ञान का स्रोत ईश्वर

मानव का सृष्टिकाल से आज तक का इतिहास स्पष्ट करता है कि मनुष्य मूलभूत ज्ञान अर्जित नहीं कर सकता है क्योंकि ज्ञान दो प्रकार का होता है– एक नैमित्तिक या मूलभूत ज्ञान और दूसरे नैसर्गिक व स्वाभाविक ज्ञान। नैमित्तिक ज्ञान एकदम मूल है जिसके बिना ज्ञान विकसित नहीं किया जा सकता है। जैसे गणित की संख्या एक दो आदि के बिना गणित व भौतिक विज्ञान के किसी क्षेत्र का विकास संभव नहीं है। समस्त भौतिक विज्ञानों की आत्मा गणित ही है और यह विश्वविख्यात एवं सर्वमान्य है कि गणित विज्ञान की आधारभूत संख्याएँ वेदों एवं वैदिक गणित विज्ञान से निकली हैं। स्वाभाविक ज्ञान मनुष्य में जन्म से ही होता है। यह ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों के व्यवहार से सम्बन्धित है। इसका विकास किया जा सकता है। इसका पशु, पक्षी, कीड़े-मकोड़ों आदि के जीवन को देखने से स्पष्ट प्रतिलक्षित होता है। मगर इस स्वाभाविक ज्ञान से नैमित्तिक ज्ञान को नहीं प्राप्त किया जा सकता है। हाँ एक बार प्रशिक्षण द्वारा नैमित्तिक ज्ञान प्राप्त होने पर मनुष्य स्वाध्याय, चिन्तन, मनन, अभ्यास, परिश्रम एवं शोध कार्य से उसकी एवं उस सम्बन्धी अनेक विषयों एवं विद्याओं की उन्नति कर सकता है। सार यह हुआ कि मूल ज्ञान से स्वाभाविक ज्ञान बढ़ाया जा सकता है। मगर अपनी-अपनी बुद्धि अनुसार प्राप्त स्वाभाविक ज्ञान से सर्वव्यापी, सर्वमान्य, शाश्वत, सृष्टि नियमानुसार मूल ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता है। नैमित्तिक ज्ञान व स्वाभाविक ज्ञान का अन्तर न समझने के कारण ही आज विश्व के तथाकथित बड़े धर्मों ने अपनी पुस्तकों को ईश्वरीय ज्ञान प्रचारित किया है।

आस्तिक जगत् में कुछ ऐसे लोग भी हैं जो ईश्वर को ज्ञान का आदिस्रोत नहीं मानते हैं। ऐसे लोगों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है– 1. सत्-असत् विवेकवादी, 2. प्रकृतिवादी और 3. सामाजिक विकासवादी।

12. इसके अतिरिक्त शतपथ ब्राह्मण, उपनिषद्, मनुस्मृति (वेदोऽखिलोधर्ममूलम्) आदि में वेदों को ही धर्म का मूल एवं ईश्वरीय ज्ञान माना है। समस्त वैदिक वाङ्मय में वेदों को ही प्रामाणिक ग्रंथ माना है। ''धर्म जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः। (मनुस्मृ० 2/13)। वेद और स्मृतियों में विरोध होने पर वेदों को ही प्रामाणिक माना जाए।

'श्रुतिस्मृतिविरोधे तु श्रुतिरेव गरीयसी।

(जाबाल स्मृति)

इस प्रकार सिद्ध होता है, कि वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है। यह ज्ञान पहले से विद्यमान था, इसी के कुछ मूल तत्त्वों को कुरान व बाइबिल में डालकर इनके अनुयायियों ने अपने ग्रंथों को भी ईश्वरीय ग्रंथ कहना प्रारंभ कर दिया जबकि अप्रामाणिकता एवम् ऐतिहासिकवाद के कारण ये ग्रंथ ईश्वरीय नहीं हैं। केवल वेद ज्ञान ही ईश्वरीय है।



मिलाता है। इसके बाद इन्द्रिय- अधिष्ठाता जीव के लिए बल कारक बहुत बड़े मननात्मक ब्रह्मकृत ऋग्वेदादि ज्ञान को परमेश्वर ने दिया।

6. अयं ते स्तोमो अग्रियो हृदि स्पृगस्तु शतमः।

अथा सोमं सुतं पिब। (ऋग्० 1/16/7)

यह सबसे पहला स्तुति समूह वेद ज्ञान हृदय को स्पर्श करने वाला तथा शांतिदायक होवे। वेद ज्ञान प्राप्त करके उत्तम ऐश्वर्य को भोगो।

7. ब्रह्मायं वाचः परमं व्योम। (यजु० 23/62)

यह ब्रह्म वेद रूपी वाणी का उत्तम स्थान है, ऐसा मानो।

8. अहमेव स्वमिदं ब्रवीमि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः।

(अथर्व० 4/6/3)

मैं (ईश्वर) साधारण तथा देवतुल्य मनुष्यों के प्रति इस प्रीतिपूर्वक सेवायोग्य ज्ञान को देता हूँ।

9. अहं सत्यमनृतं यद् वदामि देवीपरिवाचं विराश्च।

(अथर्व० 6/61/2)

मैंने ही सत्य-असत्य के भेद करके प्रजाओं के लिए दैवी वाणी (वेद वाणी) को कहा है।

10. तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।। (यजु० 31/7)

हे मनुष्यो! तुमको चाहिए कि उस पूर्ण अत्यंत पूजनीय जिसके लिए सब लोग समस्त पदार्थों को देते हैं वा समर्पण करते हैं उस परमात्मा से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद उत्पन्न हुए उस परमात्मा को जानो।

11. यस्मादृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्।

सामानि यस्य लोमान्यथर्वाऽङ्गिरसो मुखम्।। (अथर्व० 10/23/4)

जो सर्वशक्तिमान् परमेश्वर है उसी से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद उत्पन्न हुए। उसी को तुम वेदों का कर्त्ता मानो।

पहले वर्ग के लोगों का मत है परमेश्वर ने हमें सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म का निर्णय करने के लिए चेतना या चेतनात्मा दी है जिससे हम अपना कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य स्वयं निर्धारित कर सकते हैं। यह तर्क नैमित्तिक ज्ञान के विषय में ठीक नहीं है। यह उचित है कि व्यक्ति बाह्य वातावरण को देखकर स्वाभाविक ज्ञान व अपनी मान्यताओं के आधार पर कोई निर्णय ले सकता है। मगर यह निर्णय उस व्यक्ति के सामाजिक वातावरण व मान्यताओं से प्रभावित होगा। उसका आधार एक समान, मानवतावादी, सर्वमान्य, आचारसंहिता नहीं हो सकती है। इसीलिए जर्मन दार्शनिक काण्ट ने अपनी "मेटाफिजिक्स आफ मोरल्स" पुस्तक में लिखा था "Feeling which naturally differ in degree can not furnish uniform standard of good and evil, nor has any one a right to form judgements for others by his own feelings" यानी "व्यक्ति की भावनाएँ विभिन्न होती हैं जो कि भलाई-बुराई के बीच एक समान मापदंड नहीं बना सकती हैं। और न किसी को अन्यों के बारे में अपने विचारानुकूल निर्णय लेने का अधिकार है।" इसके अलावा ईश्वर, जीव, प्रकृति आदि के स्वरूप, उनके पारस्परिक सम्बन्धों, सृष्टि रचना, भौतिक ज्ञान-विज्ञान, मोक्ष साधनादि का मूल ज्ञान तो आत्म चेतना से नहीं हो सकता है। अत: यह धारणा अमान्य है।

प्रकृतिवादियों का मत है कि प्रकृति को देखकर सब ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। यह सर्वथा मान्य नहीं है। यदि ऐसा होता तो प्रकृति की गोद में पलने वाली वनवासी जनजातियाँ भी सुसभ्य, सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत होतीं। कोई भी बनवासी जाति असभ्य व अविकसित न रहती क्योंकि उसके सामने तो सीखने के लिए प्रकृति की पुस्तक सदैव समान रूप से खुली पड़ी है। किसी को शिक्षा देने, विद्यालय खोलने एवम् अध्ययन-अध्यापन की आवश्यकता ही न पड़ती। परन्तु इस प्रकृति रूपी पुस्तक को किसी के पढ़ाए बिना समझना सम्भव नहीं है। दूसरे प्रकृति,

मानव स्वभाव, नैतिकता, आत्म विवेक, ईश्वर-जीवात्मा सम्बन्धों आदि को कैसे समझाएगी?

तीसरे विकासवादियों के अनुसार धार्मिक नैतिकता एवं सामाजिक ज्ञान आदि का क्रमिक विकास हुआ है। अतः सभी प्रकार का ज्ञान विकासवाद का परिणाम है। मगर ऐसा मानना उचित नहीं है क्योंकि विकास उसी का होता है जो पहले से सूक्ष्म रूप में विद्यमान हो और यह सर्वसम्मत तथ्य है कि वेद विश्व की प्राचीनतम पुस्तक है। अतः विश्व में मूल ज्ञान वेद का ही है और जो भी ज्ञान विज्ञान की प्रगति हमें दिखाई देती है वह उसी ज्ञान का विकसित रूप है। वेद की उच्च धार्मिक एवम् आचार सम्बंधी धारणाएँ आज भी तथाकथित विकसित राष्ट्रों के लिए आश्चर्य की बात बनी हुई है। उन्हें देखकर प्राकृतिक विकासवाद के प्रवर्तक डॉ० रसैल वालेस अपने ग्रंथ ''सोशल इनविरोनमेंट्स एण्ड मोरल प्रोग्रेस'' में आश्चर्य से लिखते हैं-

"In the earliest records which have come down to us from the past we find ample indications that general ethical conceptions, the accepted standard of morality and the conduct resulting from these were in no degree inferior to those which prevail today though in some respects they differ from ours. The wonderful collection of hyms known as the Vedas is a vast system of religious teachings pure and lofty as those of the finest portion of the Hebrew Scriptures"

अर्थात् वेद के नाम से प्रसिद्ध मंत्र संहिताओं में धार्मिक बाइबिल के अच्छे से अच्छे भागों की तुलना में पवित्र और ऊँची धार्मिक भावनाएँ विद्यमान हैं। वे आज की विद्यमान नैतिकता के मापदण्डों से किसी प्रकार कम नहीं हैं।'' अतः विकासवाद के सिद्धांत नैमित्तिक ज्ञान पर लागू नहीं होते हैं।

इसकी पुष्टि में देखिए, वैदिक इतिहासार्थ निर्णय- पं० शिवशंकर, क्या वेद में इतिहास है? पं० जयदेव शर्मा, वैदिक इतिहास विमर्श- पं० वैद्यनाथ शास्त्री आदि। इनमें सभी प्रकार के ज्ञान-विज्ञान के सूत्र विद्यमान हैं। देखिए, 'सम पोजीटिव साइंसेज इन दी वेदाज- डॉ० डी० आर० मेहता। वेद पूर्णतया मानवतावादी, समतावादी, प्रेरणादायक, विश्वबन्धुत्व, एक विश्वपरिवार के समर्थक हैं। वेद के सच्चे स्वरूप को समझने के लिए महर्षि दयानन्द कृत ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, वेदभाष्य एवं सत्यार्थप्रकाश पठनीय ग्रंथ हैं। इन विषयों का स्वामी विद्यानन्द सरस्वती ने भूमिका भास्कर एवं वेदमीमांसा में विस्तृत विवेचन किया है। प्रामाणिकता की दृष्टि से महर्षि दयानन्दकृत व उनकी शैली पर आधारित वेदभाष्य ही सर्वोत्तम हैं। इनके अलावा वेद एवं वैदिक साहित्य के निम्नलिखित प्रमाणों से सिद्ध होता है कि वेद ज्ञान ईश्वरीय है एवं सृष्टि के आदि में प्रादुर्भूत हुए।

1. **अहम् ब्रह्म कृण्वम्।** (ऋग्० 10/4/9)

अर्थात् मैंने ब्रह्म (वेद) ज्ञान दिया।

2. **देवत्तं ब्रह्म गायत।** (ऋग्० 1/3/64)

परमात्मा के लिए वेद का गान करो।

3. **प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता।** (ऋग्० 1/40/3)

ज्ञान का स्वामी तथा उनकी सूनृता वाणी हमें प्राप्त हो।

4. **ऋतस्य श्लोको बधिरा ततर्द कर्णा बुधानः शुचमान आयोः।** (ऋग्० 4/23/8)

परमेश्वर का दिया एवं समझाया गया शुद्ध ज्ञान ही मनुष्य के बहरे कानों को खोल देता है।

5. **यो अदधात् ज्योतिषि ज्योतिरन्तर्यो असृजन्मधुना सं मधूनि।**
अघ प्रियं शूषमिन्द्राय मन्म ब्रह्मकृतो बृहदुक्थादवाचि।। (ऋग्० 10/54/6)

जो ज्योतियों में ज्योति डालता है मधु से मधुरों को अच्छी प्रकार

कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य के स्पष्ट आदेश हों।

7. वह ज्ञान समस्त मानवमात्र का कल्याणकारी, पारस्परिक प्रेम व विश्व बन्धुत्व का प्रेरणादायक हो। वह सर्वांगीण विकास का स्रोत एवं सभी प्रकार के क्लेशों व दुःखों से निवृत्ति दिलाने वाला हो।

वेद ईश्वरीय ज्ञान क्यों

अब विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या ये लक्षण वेद एवं तथाकथित ईश्वरीय पुस्तकों में पाए जाते हैं। विभिन्न धर्मों की उत्पत्ति एवं कुरान, बाइबिल जिन्दावस्ता आदि धार्मिक ग्रंथों के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इन ग्रंथों में मानव इतिहास है और ये कुछ ही (1500 से 3500 के बीच) वर्षों पूर्व प्रारम्भ हुए हैं जबकि मानव सृष्टि अति प्राचीन है। अतः ये ईश्वरीय ग्रंथ नहीं हैं। विस्तृत विवेचन के लिए, कुरान परिचय– पं० देवप्रकाश, चौदहवीं का चाँद– पं० चमूपति, इस्लाम के दीपक– गंगाप्रसाद उपाधयाय, कुरान दर्पण, कुरान प्रकाश, बाइबिल दर्पण– डॉ० श्रीराम, धर्म का आदिस्रोत– गंगाप्रसाद, क्रिश्चियनिटी एण्ड वेदाज– पं० धर्मदेव आदि देखिए। ईश्वरीय ज्ञान के लिए आवश्यक ऊपर लिखे सात लक्षण वेद के अलावा किसी धर्म ग्रंथ में नहीं पाए जाते हैं। अतः वेद के अलावा अन्य कोई ग्रंथ ईश्वरीय ग्रंथ नहीं है क्योंकि वेद सृष्टि के आदि में स्वयम् ईश्वर ने अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा ऋषि के हृदय में उत्प्रेरित किए। विश्व के सभी निष्पक्ष विद्वान् मानते हैं कि वेद विश्व की सबसे प्राचीन पुस्तक है। रेव० मौरिस फिलिप अपनी 'रीडिंग आफ दी वेदाज' में लिखते हैं कि–

After the latest researches into the history and chronology of books of old Testament, we may safely now call the Rigveds as the oldest book, not only of the Aryans humanity but of the world. मैक्समूलर भी ऐसा ही मानते हैं।

वेद में मानव इतिहास नहीं है। यही वैदिक वाङ्मय की परम्परा है।

आदिज्ञान के स्रोत पर परीक्षण

प्राचीन काल से ही यह जिज्ञासा रही है कि क्या मनुष्य बाह्य वातावरण व प्रशिक्षण से सीखता है अथवा उसमें मूलज्ञान की प्राकृतिक क्षमता होती है। इस समस्या पर अनेक प्रयोग किए गए हैं। असीरिया के राजा असुर-वनीपाल, यूनान के राजा सेमेटिकल, सम्राट् फ्रेडरिक द्वितीय, स्काटलैंड के जेम्स चतुर्थ एवं भारत के अकबर बादशाह ने मनुष्य के बच्चों को मनुष्यों से सर्वथा अलग कर वन्यप्राणियों के वातावरण में रखा। उन्हें वैसा ही भोजन दिया गया। कोई मानव मात्र उनसे बोला नहीं। बड़े होने पर वे बच्चे आकृति में तो मनुष्य थे, मगर उठने बैठने खाने-पीने एवं बोली में वे पशुवत् थे जिनके बीच उन्हें रखा गया था। वे मानवी भाषा न सीख सके। निष्कर्ष यह रहा कि मनुष्य बिना सिखाए मानवीय संस्कृति स्वतः विकसित नहीं कर सकता है।

इसी प्रसंग में स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है कि 'जैसे किसी बालक को जन्म से एकान्त देश, अविद्वानों या पशुओं के संग रख देवें तो वह जैसा संग होगा वैसा ही हो जावेगा।'' ''इसका दृष्टांत जंगली भील आदि हैं।'' वे पुनः लिखते हैं ''जैसे जंगली मनुष्य सृष्टि को देखकर भी विद्वान् नहीं होते और जब उनको कोई शिक्षक मिल जाए तो विद्वान् हो जाते हैं और अब भी किसी से पढ़े बिना कोई विद्वान् नहीं होता। इसी प्रकार जो परमात्मा उन आदि सृष्टि नियमों को वेद विद्या द्वारा न पढ़ाता और वे अन्यों को न पढ़ाते तो सब लोग अविद्वान् ही रह जाते।''

प्रमाण

न केवल भारतीय बल्कि वेदों को अपौरुषेय न मानने वाले पाश्चात्य दार्शनिक एवं ईसाई पादरी भी यह मानते हैं कि सत्य सनातन ज्ञान का आदि स्रोत ईश्वर ही हो सकता है, अन्य कोई नहीं। देखिए प्रमाण–

1. दार्शनिक काण्ट लिखता है कि ''We may well conede that if

the Gospel had not previously taught the universal moral laws in their full purity, reason would not yet have attained so perfect an insight of them" यानी हम भलीप्रकार मान सकते हैं कि यदि ईश्वरीय ज्ञान ने हमें प्रारंभ में सत्य शाश्वत नियमों को न बताया होता तो केवल बुद्धि उन्हें इतने निर्भ्रान्त एवं पूर्ण रूप में प्राप्त न कर पाती।

2. इसी प्रकार डॉ० फ्लेमिंग ने कहा "If we are to obtain more solid assurances, it can not come to the mind of man groping feebly in the dim light of unassisted reason but only by a communication made directly from this supreme mind to the finite mind of man (Science and Religion by Seven man of Science)

अर्थात् यदि हमें निश्चित ज्ञान और आश्वासन प्राप्त करना हो तो वह सहायताहीन केवल तर्क के धुंधले प्रकाश में निर्बलतापूर्वक भटकते हुए मनुष्य के मन को प्राप्त नहीं हो सकता किन्तु सर्वज्ञ परमात्मा द्वारा मनुष्य के सीमित मन तक पहुँचाए ज्ञान से ही ऐसा होना सम्भव है।

3. 'वेदविनाशक मैक्समूलर तक 'इण्ट्रोडक्शन आफ साइंस एण्ड रिलीजन' में लिखता है- "If there is a God who has created heaven and earth, it will be unjust on his part if He deprives millions souls before Moses of his divine knowledge to the human beings from the very first appearance of man on earth." यानी यदि कोई ईश्वर है, जिसने पृथ्वी और आकाश उत्पन्न किए हैं तो वह अन्यायकारी होगा यदि वह मूसा से पहले उत्पन्न लाखों मनुष्यों को अपने दिव्य ज्ञान से वंचित रखे।'' न्याय और तर्क से ज्ञात होता है कि ईश्वर ने मनुष्यों को अपना ज्ञान मानव संसार की रचना के समय प्रदान किया।

दार्शनिक शोपनहार लिखता है- "Almost superhuman conceptions whose originators can hardly be said to be

किसी भी पुस्तक के आदि ज्ञान एवम् ईश्वरीय होने को तर्क की कसौटी पर परखा जा सकता है। ईश्वरीय ग्रंथ में निम्नलिखित लक्षण होने चाहिएँ-

1. उस ज्ञान का आविर्भाव मानव सृष्टि के प्रारम्भ से होना चाहिए।

2. उस ज्ञान में मानवमात्र के क्रियाकलापों का इतिहास नहीं होना चाहिए जैसा कि हम रामायण, महाभारत, बाइबल, कुरान व अन्य इतिहास की पुस्तकों में देखते हैं क्योंकि ऐसी स्थिति में उस पुस्तक से पहले के लोग ईश्वरीय ज्ञान से वंचित हो जावेंगे।

3. वह ज्ञान सृष्टि विज्ञान के सत्य शाश्वत् नियमों के अनुकूल एवं प्रकृति के रहस्यों को स्पष्ट करने वाला होना चाहिए।

4. वह ज्ञान तर्कसंगत, विवेकपूर्ण एवं विरोधाभास से मुक्त होना चाहिए। ऐसा ज्ञान सम्पूर्ण, मानवीय एवं प्राकृतिक-सभी प्रकार के ज्ञान-विज्ञान का मूल आधार होना चाहिए।

5. वह ज्ञान ईश्वर के गुण, कर्तृव्य, स्वभाव एवं स्वरूप के अनुरूप हो। जैसे ईश्वर सर्वशक्तिमान्, सर्वाधार, सृष्टिकर्त्ता, पक्षपात रहित न्यायकारी, सर्वज्ञ, सर्वान्तर्यामी, सर्वव्यापक, निराकार, निर्विकार, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र आदि गुणसम्पन्न है। उसका वैसा ही वर्णन होना चाहिए।

6. वह ज्ञान सार्वदेशिक, सार्वभौमिक, सार्वकालिक और विश्व के समस्त मानवमात्र के लिए एकसमान और व्यवहार करने योग्य होना चाहिए। वह पूरब-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण क्षेत्र, प्रांत देश की सीमाओं से मुक्त हो। वह गोरे-काले, जाति-बिरादरी, स्त्री-पुरुष, नस्ल, आकृति, भाषा, बोली, गरीब-अमीर, आदि के भेदभावों से पूर्णतया मुक्त, समतावादी और मानवतावादी होना चाहिए। वह समस्त एक मानव जाति के लिए एकसमान आचार संहिता का प्रतिपादक हो। वह ज्ञान मत, सम्प्रदाय व सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक वादों की संकीर्णताओं एवं पक्षपात, घृणा-द्वेष, ऊँच-नीच के भेदभावों से मुक्त होना चाहिए। उसमें

सृष्टि के आरम्भ में ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता होती है और इसीलिए परम ब्रह्म परमेश्वर ने सृष्टि के आदि में वेदज्ञान दिया ताकि समस्त मानव अपनी सर्वांगीण उन्नति व सांसारिक सुख भोगने के साथ-साथ, मरणान्त मोक्ष को पा सकें। उदाहरण के लिए-

अपूर्वेणेषिता वाचस्ता वदन्ति यथायथम्।
वदन्तीर्यत्र गच्छन्ति तदाहुर्ब्राह्मणं महत्।। (अथर्व० 10/8/33)

अर्थात् उस कारण रहित परमात्मा ने अपार कृपा कर सृष्टि के आदि में मनुष्य के ज्ञान के लिए ब्रह्म-ज्ञान का उपदेश दिया जिससे हमें यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है।

उपरोक्त प्रमाणों, तर्कों एवं शास्त्रीय वचनों से सिद्ध होता है कि मनुष्य को सृष्टि के आदि में नैमित्तिक ज्ञान की आवश्यकता होती है। उसे ईश्वर के अलावा कोई दूसरा नहीं दे सकता है और ईश्वर का ईश्वरत्व भी इसी में है कि वह ऐसा ज्ञान अपनी प्रजा के कल्याण के लिए प्रारंभ में ही दे। जैसे पिता अपने पुत्र के कल्याणार्थ सब प्रकार की शिक्षा-दीक्षा देकर उसका कल्याण चाहता है। उसी प्रकार ईश्वर ने अपनी सृष्टि के कल्याणार्थ सृष्टि के साथ ही ऋषियों के माध्यम से सत्य सनातन पवित्र वेद ज्ञान दिया ताकि मानव मात्र न केवल अपना कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य निर्धारित कर सके बल्कि सभी प्रकार की ज्ञान-विज्ञान व कला-कौशल की उन्नति कर सकें। फिर भगवान् कर्मफल प्रदाता व न्यायकारी है। वह ईश्वरीय नियमों को बताए बगैर उनके न मानने वालों को सजा कैसे दे सकता है?

ईश्वरीय ग्रंथ की कसौटी

वैदिक धर्म के समान विश्व के सभी आस्तिक मत जैसे ईसाई, इस्लाम, पारसी आदि मानव सृष्टि के प्रारंभ में ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता को मानते हैं और सभी अपने ग्रंथों के ईश्वरीय ग्रंथ होने का दावा करते हैं।

mere men" ये (वेद, उपनिषद्) सिद्धांत ऐसे हैं जो कि एक प्रकार से अपौरुषेय ही हैं। यह जिनके मस्तिष्क की उपज हैं उन्हें निरे मनुष्य कहना कठिन है। वे पुनः लिखते हैं :

"This goes to confirm the popular belief that the Vedas are eternal and not a seribable to any human agency and that they emanated from Brahma the creator Himself."

यानी इन्हीं सब कारणों से सर्व साधारण की यह मान्यता पुष्ट होती है कि वेद नित्य, अपौरुषेय और ईश्वर प्रदत्त हैं।

मौरिस फिलिप 'टीचिंग आफ दी वेदाज़' में लिखता है "The conclusion therefore is inevitable that the development of religious thought in India has been uniformly downward, and not upward, deterioration and not evolution, we are justified, therefore in concluding that the higher and purer conceptions of the vedic aryans were the results of a primiture divine revelations." (p.231) यानी इसलिए हमारे लिए यह परिणाम निकालना अनिवार्य है कि भारत में धार्मिक विचार का विकास नहीं किन्तु ह्रास ही हुआ है। उन्नति नहीं, अवनति ही हुई है। इसलिए हम यह परिणाम निकालने में न्याययुक्त हैं कि वैदिक आर्यों के उच्चतर और पवित्रतर ईश्वरादि विषयक विचार एक प्रारम्भिक ईश्वरीय ज्ञान के प्रादुर्भाव का परिणाम था।'

6. विद्वान् आर. फ्लिंट लिखते हैं "The light of nature and the works of creation and providence are not sufficient to give that knowledge of God and of His will which is necessary unto salvation. The deepest discoveries and highest achievements of the unaided intellect need to be supplemented by truths which can only come to us through special revelation (Theism, p 300) अर्थात् "प्रकृति का प्रकाश एवं सृष्टि का कार्य ईश्वर को समझने एवं मोक्ष प्राप्ति के लिए काफी नहीं

है। गहनतम शोध और उच्चतम उपलब्धियों के लिए भी सहायताहीन बुद्धि की सत्य ज्ञान के द्वारा पूर्ति की आवश्यकता है जो कि हमें ईश्वरीय ज्ञान द्वारा ही प्राप्त हो सकती है।

7. इस विषय में ग्रीक दार्शनिक प्लेटो लिखते हैं– "We will wait for one, be He a God or an inspired man to instruct us in religious duties and to take away the darkness from our eyes (एल्सीवियाडस); we must sieze upon the best human views in navigating the dangerous sea of life, if there is no safer or less perious way, no stouter vessel, no Divine Revelation, for making this voyage (Phaedo).

अर्थात् धार्मिक कर्त्तव्यों की शिक्षा देने के लिए हमें या तो परमेश्वर या उस द्वारा प्रेरित किसी पुरुष की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी जो हमारी आँखों के आगे छाए अंधकार को दूर कर दे। इस मानव जीवन रूपी भयंकर समुद्र को भली-भाँति पार करने के लिए यदि हमें ईश्वरीय ज्ञान द्वारा कोई प्रबल साधन मिलना सर्वथा असम्भव हो तो अच्छे से अच्छे मानवीय विचारों पर हमें निर्भर रहना पड़ेगा।'' प्लेटो डाइलोग नामक पुस्तक में लिखते हैं–

A man should persevere until he has achieved one of two things, either he should discover or be taught the truth about them, or if this is impossible, I would have hem take the best and most irrefragable of human theories and let this be the raft upon which he sails through life-not without risk as I admit, if he cannot find some word of God which will surely and safely carry him.

भाव यह है कि 'ईश्वरीय ज्ञान की सहायता बिना मनुष्य निश्चय और सुरक्षापूर्वक सागर के पार नहीं पहुँच सकता है।

9. ईश्वरीय ज्ञान के प्रभाव में, दार्शनिक सुकरात ने इसी भाव को बड़े निराशा के स्वर में कहा है–

You may resign yourself or sleep and give yourself upto

despair, unless God in this goodness, shall reach safe to send you instruction.

अर्थात् ''तुम या तो निद्रा के प्रति अपने को समर्पण कर सकते हो या निराशा के प्रवाह में बह सकते हो जब तक कि परमेश्वर अपनी कृपा से तुम्हें शिक्षा न दे।'' उपरोक्त पाश्चात्य प्रमाणों से सिद्ध होता है कि ज्ञान का आदि स्रोत ईश्वर ही है।

भारतीय परम्परा के प्रमाण

भारतीय दर्शन एवं वैदिक वाङ्मय तो प्रारम्भ से ही मानता है कि मनुष्य मात्र के नैमित्तिक ज्ञान के लिए ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता है।

10. वेदव्यास कहते हैं–

अनादि निधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयंभुवा।
आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वाः प्रवृत्तयः।। (म०भा० शां० पं० 232/24)

परमात्मा ने सर्ग के आदि में वेद का ज्ञान दिया। जिससे आगे की सम्पूर्ण प्रवृत्तियों एवं व्यवहार का प्रकाश हुआ।

11. महर्षि पतञ्जलि कहते हैं–

'स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्। योगदर्शन (1/2/26)
आदि गुरु ज्ञानदाता ईश्वर ही है क्योंकि वही समय की सीमा से परे है।

12. कपिल ऋषि कहते हैं–

न पौरुषेयत्वं तत् कर्तुः पुरुषस्याभावात्।
निजशक्त्यभिव्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यात्।। सांख्यदर्शन (का० 5/51)

अर्थात् वेदों का बनाने वाला कोई पुरुष नहीं हुआ। इसीलिए वेद अपौरुषेय हैं। वे स्वतः प्रमाण हैं।

13. वेदान्तदर्शन (1/3/29) में स्पष्ट है **(अतएव च नित्यत्वम्)** वेदों की नित्यता सिद्ध है। वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं।

14. इसके अतिरिक्त वेदों में अनेक मंत्र हैं जिनसे सिद्ध होता है कि